जब लता मंगेशकर ने चित्रगुप्त से कहा – आपको अपनी चप्पल पर यकीन है, हमारे गाने पर नहीं

चित्रगुप्त के संगीत की मधुरता दिग्गज संगीतकारों से कम नहीं थी. फिर भी हिंदी फिल्म उद्योग में वे ताउम्र हाशिये पर रहे. जब भी हिंदी फ़िल्म संगीत की बात होती है तो 1950 से लेकर 1965 तक रचे गए संगीत के माधुर्य का जिक्र जरूर होता है. लता मंगेशकर के प्रभाव के साथ मदन मोहन, नौशाद, एसडी बर्मन, शंकर-जयकिशन और सी रामचंद्र को याद किया जाता है. लेकिन एक संगीतकार का नाम आमतौर पर नहीं लिया जाता. ये संगीतकार हैं चित्रगुप्त. वे ऐसे संगीतकार रहे जिनके हिस्से उस दौर में अक्सर 'बी' और 'सी' ग्रेड की ही फ़िल्में आईं पर उनमें दिया हुआ संगीत किसी भी लिहाज़ से उन दिग्गजों के संगीत से कम नहीं था, जिनका नाम ऊपर लिया गया है.

चित्रगुप्त के परिवार की जड़ें बिहार के गोपालगंज में थीं. वे उन गिने-चुने संगीतकारों में से थे जो पढाई के क्षेत्र में काफ़ी आगे थे. पटना विश्वविद्यालय से उन्होंने अर्थशास्त्र में एमए किया था और लखनऊ के बेहद प्रतिष्ठित भातखंडे कॉलेज से संगीत की शिक्षा ली थी. संगीतकार बनने से पहले चित्रगुप्त पटना में लेक्चरर भी रहे. 1945 में वे मुंबई चले आए, अपनी क़िस्मत आज़माने. पहला मौका उन्हें फ़िल्म 'रॉबिनहुड'(1946) में मिला.

वह स्टंट फ़िल्मों का दौर था. अपने शुरुआती फ़िल्मी करियर में चित्रगुप्त स्टंट जॉनर वाली फ़िल्मों के संगीतकार के साथ भक्ति फ़िल्मों में संगीत देने के लिए प्रसिद्ध हुए. मिसाल के तौर पर फ़िल्म 'तुलसीदास' (1954) का भजननुमा गीत 'मुझे अपनी शरण में ले लो राम' कहा जा सकता है. इसे लिखा था हिंदी साहित्य की बड़ी मशहूर हस्ती गोपाल सिंह नेपाली ने. इन दोनों की जुगल जोड़ी ने कई शानदार गाने बनाए. नवरात्रि के समय गाये जाने वाली आरती 'अंबे तू है जगदंबे काली' आज भी डांडिया रास के पंडालों में बजता है.

यह सिलसिला लगभग 10 साल चला. इसके बाद चित्रगुप्त को लता मंगेशकर का साथ मिला. यहां से उनकी क़िस्मत ही बदल गयी. लता ने चित्रगुप्त की धुनों की मधुरता बढ़ाई तो चित्रगुप्त के संगीत ने भी लता की स्वर की मधुरता को नए आयाम दिए. एक के बाद एक सफल और मधुर गीत दोनों के हिस्से में जुड़ते चले गए. उदाहरण के लिए सुपरहिट फ़िल्म 'भाभी' के सारे गीत यादगार बन पड़े हैं. 'चल उड़ जा

रे पंछी' (राग पहाड़ी) या 'चली चली रे पतंग' (भैरवी) या 'छुपा कर मेरी आंखों को वो पूछें कौन हैं जी हम' गीत तो बेहद मधुर गीत है. फ़िल्म 'आकाशदीप'(1965) का 'दिल का दिया जला के गया ये कौन मेरी तन्हाई में' तो निश्चित तौर लता मंगेशकर के सबसे मधुरतम गीतों में से कहा जाता है. इस गीत की ख़ास बात यह है कि लताजी ने इसे बिलकुल हौले से गाया है. ऐसे कि जैसे वे ही इसे सुन सकें.

'लता सुर गाथा' में लताजी उनसे जुड़े एक दिलचस्प क़िस्से को याद करती हैं. चित्रगुप्त एक दिन लंगड़ा कर चल रहे थे. लताजी ने उनसे पूछा कि क्या उनके पैर में दिक्कत है तो उन्होंने कहा कि वे टूटी हुई चप्पल पहनकर आये हैं. इस पर लताजी बोलीं, 'चलिए, आपके लिए नयी चप्पल ले आते हैं.' चित्रगुप्त झेंपते हुए बोले, 'ये चप्पल मेरे लिए शुभ है. जिस दिन इसे पहनकर आते हैं, रिकॉर्डिंग अच्छी होती है.' लताजी ज़ोर से हंसने लगीं. उन्होंने कहा, 'चित्रगुप्तजी को अपनी चप्पल पर यकीन है, हमारे गाने पर नहीं!'

फ़िल्म 'भाभी' की सफलता का असर ऐसा हुआ कि चित्रगुप्त एक से एक मधुर धुनें बनाने लगे. लता मंगेशकर की मिठास और चित्रगुप्त की मेलोडी ने गानों में अजब रंग भर दिए. वहीं, लता मंगेशकर और मोहम्मद रफ़ी के साथ उनके बनाये गए युगल गीत भी कम दिलकश नहीं बने हैं. मिसाल के तौर पर फ़िल्म 'वासना' (1968) का गीत 'ये पर्वतों के दायरे, ये शाम का धुंआ'. इस फ़िल्म में उन्हें साहिर लुधायनवी का साथ मिला. उस दौर में साहिर का बहुत बड़ा नाम था. जमाने की रवायत के उलट वे गीत लिखते थे और संगीतकार उन पर धुन बनाते थे. पर अफ़सोस यह रहा कि यह साथ महज़ एक फ़िल्म तक ही सिमटकर रह गया.

मोहम्मद रफ़ी और मुकेश चित्रगुप्त के प्रमुख पुरुष गायक रहे. रफ़ी साहब ने उनके संगीत निर्देशन में बनी फ़िल्म 'ऊंचे लोग' (1965) में एक गीत 'जाग दिले दीवाना, रुत जागी वस्ल-ये यार की' गाया था. इस गीत में ऐसा लगता है मानो चित्रगुप्त ने उन्हें आवाज़ दबाकर, कुछ नाक का पुट और लफ़्ज़ों को हौले-हौले से लुढ़काने को कहा होगा. बहुत से लोग मानते हैं कि मोहम्मद रफ़ी ने इस तरह बिरले ही

गाया होगा. दिग्गज मदन मोहन ने उनसे कुछ ऐसे ही अंदाज़ में फ़िल्म 'हीर रांझा' में 'मेरी दुनिया में तुम आईं' गवाया था. बहुत कम लोग जानते होंगे कि 'भाभी' का मशहूर गीत 'चल उड़ जा रे पंछी' पहले तलत महमूद से गवाया गया था. गाना आया तो इसमें मोहम्मद रफ़ी की आवाज़ सुनाई दी.

मोहम्मद रफ़ी ने चित्रगुप्त के संगीत से सजी फ़िल्म, 'तूफ़ान में प्यार कहां' में एक गीत गया था, 'इतनी बड़ी दुनिया, जहां इतना बड़ा मेला' ज़बरदस्त दार्शनिक अंदाज़ में गया. सिगरेट पीते हुए अशोक कुमार एक पेड़ के नीचे बैठे इसे गा रहे हैं और आसपास का मंज़र इस गीत को अलग ही मुक़ाम पर ले जाता है. प्रेम धवन के बोल थे. उन्होंने और चित्रगुप्त ने कई फ़िल्मों में जादू रचा था.

चित्रगुप्त ने कुछ प्रयोग किशोर कुमार की आवाज़ से साथ भी किए. उन्होंने 'एक राज़' (1963) में किशोर दा क्लासिकल गीत गवाए. उनकी आवाज़ में 'अगर सुन ले तो एक नगमा हुज़ूरे यार लाया हूं', 'गंगा की लहरें' (1964) में 'मचलती हुई हवा में छम-छम' और छेड़ों न मेरी ज़ुल्फें' बड़े उत्कृष्ट गीत बन पड़े हैं.

यह वह दौर था जब चित्रगुप्त बड़े व्यस्त संगीतकार हो गए थे. पंकज राग 'धुनों की यात्रा' में चित्रगुप्त के बेटे आनंद के हवाले से बताते हैं, 'एक रोज़ आनंद बक्शी उनके घर के बगीचे में गीत लिख रहे थे तो मजरुह कहीं और डटे हुए थे, राजेन्द्र कृष्ण उनके संगीत-कक्ष में लगे थे और प्रेम धवन पिछवाड़े के नारियल के पेड़ के नीचे लिख रहे थे, और चित्रगुप्त बारी-बारी से एक हेडमास्टर की तरह सबके पास जाकर उनकी प्रगति आंक रहे थे.'

पंकज राग लिखते हैं कि चित्रगुप्त बड़े सरल स्वभाव के व्यक्ति थे. जहां शंकर-जयकिशन एक गीत के लिए पांच लाख रुपये ले रहे थे, वहीं चित्रगुप्त 20 हजार भी संकोच से मांगते थे. हालांकि बात यह भी है कि इसी सरलता के चलते वे अपने पैर जमा पाए. एक दौर में जब उनके पास काफी काम था, तब भी एसडी बर्मन के कहने पर उन्होंने एक फ़िल्म में भक्ति संगीत दिया था.

मध्यवर्गीय समाज की हलचल और उसके तौर-तरीक़ों वाली ज़िंदगी के इर्द-गिर्द बुनी फ़िल्मों का संगीत चित्रगुप्त का सिग्नेचर स्टाइल था. मैन्डोलिन का जितना प्रभाव उनके संगीत में मिलता है, उतना किसी और के संगीत में नहीं. बहुत कम लोगों को पता होगा कि लाल बहादुर शास्त्री जी की पत्नी ललिता शास्त्री जी के दो गीतों को उन्होंने संगीत से रचा था. चूंकि वे पूर्वांचल की पृष्ठ भूमि से आते थे, लिहाज़ा, हिंदी फ़िल्मों के साथ-साथ चित्रगुप्त ने भोजपुरी फ़िल्मों में भी अच्छा संगीत दिया.

उनके संगीत में इतनी मधुरता के बावजूद उन्हें बड़े बैनर की फ़िल्में नहीं मिलीं. इसके पीछे जो कारण हो सकता है वह यह कि फ़िल्मीदुनिया हमेशा से ही ख़ेमों में बंटी रही है. निर्माता-निर्देशक अपनी पसंद के कलाकारों को ही बार-बार अपनी फ़िल्मों में लेते हैं. पर चित्रगुप्त ने कभी इसका मलाल नहीं किया.

जो भी है, यह ज़िंदगी और इसकी दास्तां बेहद अजीब है. कभी इस क़दर उलझी नज़र आती है कि हुनरमंद व्यक्ति को यथोचित मुक़ाम नहीं मिलता, और कभी इतनी सुलझी कि दो कदम चले और मंजिल नज़र आ गई. साल 1988 में चित्रगुप्त ने आख़िरी बार किसी फ़िल्म में संगीत दिया था. इत्तेफाक देखिए कि उसी साल उनके बेटों की जोड़ी आनंद-मिलिंद ने 'क़यामत से क़यामत तक' में संगीत देकर दुनिया में तहलका मचा दिया. पिता की साधना सफल हो गई थी. उनके पुत्रों ने कई फ़िल्मों में यादगार

संगीत दिया है. जीवन के अंतिम वर्षों में चित्रगुप्त तुलसीदास की चौपाइयां ज़रूर दोहराते होंगे, 'प्रभु की कृपा भयउ सब काजू, जनम हमार सुफल भा आजू'

साभार- https://satyagrah.scroll.in/